International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030, Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 1; Issue 7; July 2016; Page No. 16-18

बाल्मीकि एवं भवभूति की करुणरसाभिव्यक्ति का तुलनात्मक अध्ययन

[1] डॉ. वेदप्रकाश मिश्र, [2] वुल्टि मान्ना*

[1] संस्कृत विभागाध्यक्ष, डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.), भारत

[2*] पी–एच. डी. शोध छात्रा, संस्कृत विभाग, डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.), भारत

सारांशः

रस संस्कृत साहित्य का अत्यन्त प्राचीन शब्द है। इसका प्रयोग वैदिक संहिताओं में भी हुआ है। नाट्यशास्त्र के रचयिता भरतमुनि को रस सिद्धान्त के प्रवर्तक माने जाते है। रसानुभूति का सर्वप्रथम विवेचन आचार्य भरतमुनि ने किया है। रस के विषय में जितना सूक्ष्म चिन्तन भारतीय काव्यशास्त्रियों ने किया है उतना किसी अन्य देश में नहीं हुआ है। काव्य के अन्तर्गत श्रव्य अथवा दृश्य कोई सा भी काव्य हो यदि उसमें रस न रहे, भाव न रहे तो काव्य में कोई आनन्द की अनुभूति नहीं होती। **न हि रसादृते कश्चिदर्थः प्रवर्तते।**[1]

साहित्यदर्पणकार ने तो स्पष्ट रूप से **वाक्यं रसात्मकं काव्यम्**[2] कहकर रस की प्रधानता घोषित की है। इस तरह हम देखते हे कि अनेक ग्रन्थों में तथा इनके रचनाकारों ने अपने रचना में रस को उपस्थापन किया है। महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण और महाकवि भवभूति की सर्वोत्कृष्ट रचना उत्तररामचरित में रस तथा करुण रस की अभिव्यक्ति दिखाई पड़ती है।

कूटशब्द– करुण रस, निर्वासन, अभिव्यक्ति, तुलना, शोक।

प्रस्तावना

किसी कृति विशेष का मूल्यांकन तुलनात्मक विश्लेषण से किया जा सकता है। इस पद्धति में प्रथम कृति की सापेक्षता में द्वितीय कृति की अथवा द्वितीय कृति की सापेक्षता में प्रथम कृति का मूल्यांकन किया जाता है। इस प्रकार यह अध्ययन सापेक्षता का अध्ययन है। यह पद्धति साहित्य की आलोचना में विश्वप्रसिद्ध पद्धति मानी जाती है। इसी पद्धति के आधार पर हम वाल्मीकि एंव भवभूति के करुण रस का अध्ययन करना चाहेंगे।

वाल्मीकि एंव भवभूति के करुण रस के तुलनात्मक विश्लेशण के प्रसंग में हम यह कहना चाहेंगे कि वाल्मीकि रामायण को आदि महाकाव्य होने का गौरव प्राप्त है और उसकी बहुविध सनातन महत्ता है। वाल्मीकि ने श्रीराम, सीता आदि के महान शील को उद्घाटित करने का लक्ष्य लेकर 'रामायण' की रचना कि है और भवभूति ने करुण रस की प्रतिस्थापना के लक्ष्य को लेकर 'उत्तररामचरित' की रचना की है। यह लक्ष्य भिन्नता का प्रभाव उनके रचनाओं में पड़ना अनिवार्य था। यह अन्तर हमें दोनों रचनाओं की करुण रस के प्रयोग में दिखाई पड़ जाती है।

बाल्मीकि की करुण रस–

महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण संस्कृत साहित्य का आदि महाकाव्य है। इसमें प्रधान रस करुण की व्यंजक परिस्थितियों की संख्या एंव रस की प्रगाढ़ता बहुत अधिक है। अनेक प्रसंगों में करुण रस विद्यमान है। वाल्मीकि ने भले ही श्रीराम के तेज, पराक्रम और पुरुषोत्तम गुणों के प्रकाशन हेतु रामायण लिखी, तथापि इनकी अवचेतन प्रेरणा क्रौंचवध है, जिसकी आधार पीठिका करुण रस है। आचार्य आनन्दवर्धन ने स्पष्टतः करुण को ही रामायण का मुख्य रस कहा है। रामायण का आरम्भ करुण रस से होता है तथा रामायण का अन्त भी करुण रस से ही होता है–

> **रामायणे हि करुणो रसः स्वयमादिकविना सूचितः 'शोकः श्लोकत्वमागतः' इत्त्येवैवादिना। निर्व्यूदश्च स एवं सीताऽत्यन्तवियोग पर्यन्तमेव स्वप्रबन्धमुपरचयता।।**[3]

रामायण में 'शोकः श्लोकत्वमागतः' कहने वाले आदिकवि वाल्मीकि ने स्वयं ही करुण रस का प्राधान्य सूचित किया है और सीता के अत्यन्त वियोगपर्यन्त ही रचना करके उसका निर्वाह भी किया है। आदिकवि वाल्मीकि की यह विशेषता है कि उन्होंने प्रतिनायक पक्ष के शोक का भी सजीव चित्रण किया है। शोकभाव के चित्रण के कारण ये सभी प्रसंग करुण रस की श्रेणी में आते है। रामायण में सर्वत्र करुण रस की अभिव्यक्ति दृष्टिगत होती है।

कैकेयी की वरदान याचना से विकल राजा दशरथ राम को बुलवाते है। वेदना तथा आत्मग्लानि से इतने पीड़ित दिखाई पड़ते है कि राम को अपने नेत्रों से देखने के लिए साहस भी नहीं कर पा रहे है और न ही कुछ बोल पा रहे है। केवल राम शब्द ही निकाल रहे है–

> **रामेत्युक्त्वा तु वचनं वाष्पपर्याकुले क्षणः।**
> **शशाक नृपतिर्दीनो नेक्षितुं नाभिभाषितुम्।।**[4]

बाल्मीकि ने यहां पर करुणा का स्वरूप कितने सुन्दर ढंग से चित्रित किया है। अपनी रानियों से घिरे राजा दशरथ अत्यन्त दीन होकर प्रियं पुत्रां दक्ष्यामि एसा कहते हुए महल से बाहर निकल आये। उस समय विलाप करती हुई स्त्रियों के आर्तनाद से सम्पूर्ण वातावरण शोकमय हो गया–

> **शुश्रुवे चाग्रतः स्त्रीणां रुदतीनां महास्वनः।**
> **यथा नादः करेणूनां बद्धे महति कुंजरे।।**[5]

करुण के प्रसंग में आदिकवि ने पशु–पक्षी, वृक्ष इत्यादि जड़–चेतन सभी के द्वारा राम के वियोग में संवेदन प्रकट करना चित्रित किया है। ऐसा लगता है मानो मार्ग में उपस्थित तमसा नदी अपने तिरछे प्रवाह द्वारा राम को वन जाने से रोक रही है–

> **एवं विकोशतां तेषां द्विजातीनां निवर्तनेः।**
> **ददृशे तमसा तत्र वारयन्तीव राघवम्।।**[6]

कवि ने राजा दशरथ की मृत्यु के वाद का वर्णन बड़े ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है। उनके मृत्यु से दुःखी सभी रानियाँ शोक से सन्तप्त होने से मूर्च्छित होकर गिर पड़ी –

ततः सर्वा नरेन्द्रस्य कैकेयी प्रमुखाः स्त्रियाः।
रुदत्यः शोकसन्तप्ता निपेतुर्गतचेतनाः।।[7]

राम के वनगमन से उत्पन्न भरत की वेदना में शोक के आलम्बनों का समावेश दृष्टिगोचर होता है। उनके शोक में पिता की मृत्यु तथा भातृ वियोग के साथ गम्भीर मूल्यक्षति चेतना भी मिश्रित है। सर्वाधिक शोकोत्पादक अवस्था होती है किसी भी अत्यात्मीयजन का अन्त्येष्टि संस्कार। पिता के निधन का यह दारुण समाचार सुनकर राम की आत्मा विलख उठी।
सीता हरण पर राम का शोक उसी प्रकार दिखलाई पड़ता है जैसे हेमन्त ऋतु में कमलिनी हिम से ध्वस्त हो श्रीहीन हो जाती है और पर्णशाला कान्तिहीन हो गयी–

ददर्श पर्णशालां च सीतया रहितां तदा।
श्रिया विरहितां ध्वस्तां हेमन्ते पद्मिनीमिव।।[8]

बाल्मीकि रामायण में राम द्वारा सीता निर्वासन के समय करुण रस दृष्टिगत होता है। सीता के कष्टों के चित्रण में पाठक करुण रस में निमग्न हो जाते है। सीता गंगा में डूबकर अपने प्राण त्याग सकती थी, किन्तु राम का राजवंश चलते रहना चाहिए यह भाव उन्हें इस कार्य से रोक देता है। लक्ष्मण के सम्मुख अपने प्राण–वल्लभ के लिए वे कहती है–

पतिर्हि देवता नार्याः पतिर्बन्धु पतिर्गुरूः।
प्राणैरपि प्रियं तस्माद् भर्तुः कार्यं विशेषतः।।[9]

लक्ष्मण द्वारा सीता के वन में छोड़कर आने पर सीता का शोकपूर्ण विलाप अत्यन्त कारुणिक बन गया है। अत्यन्त दुःखी होकर वे लक्ष्मण से कहती है कि उन्हें तो ऐसा प्रतीत होता है मानो उनका जन्म दुःखों के सहने के लिए ही हुआ है–

मामिकेयं तनुनूयं सृष्टा दुःखाय लक्ष्मणः।
धात्रा यस्यास्तथा मेऽद्यदुःखमूर्तिः प्रदृश्यते।।[10]

सीता के वचनों को सुनकर लक्ष्मण मर्माहत हो उठते है। बाल्मीकि रामायण में लक्ष्मण के प्रसंग में राम के हृदय का शोक प्रकट हुआ है। राम लक्ष्मण का उल्लेख करते हुए कहते है कि प्रत्येक देश में स्त्रियां मिल सकती है बन्धु भी प्राप्त हो सकते है, किन्तु ऐसा कोई देश मुझे नहीं दिखाई देता जहां लक्ष्मण जैसे सहोदर भाई मिल सके–

देशे देशे कलत्राणि देशे देशे च बान्धवाः।
तं तु न पश्यामि यत्र भ्राता सहोदरः।।[11]

इस प्रकार– हम देखते है कि राम के सामने सीता के भीतर अन्तर्ध्यान होने के दृश्य से रामायण का अन्त भी करुणा से ही होता है। अतः यह सिद्ध होता है कि वाल्मीकि रामायण में करुण रस की पुष्टि अंगीरूप में हुई है। इस करुण रस की अभिव्यक्ति काव्य में सर्वत्र दृष्टिगत होती है, जो सहृदय को प्रभावित करने वाली है।

भवभूति की करुण रस–

भवभूति के तीन नाटक है– महावीरचरित, मालतीमाधव और उत्तररामचरित। महावीरचरित में वीर, मालतीमाधव में शृंगार और उत्तररामचरित में करुण रस प्रधान है। भवभूति ने करुण रस को प्रधान रस के रूप में स्थापित कर अपनी काव्य–कीर्ति को सदा के लिये अमर बना दिया है। वयः परिनाम के साथ इस रस की महत्ता तथा गरिमा को भवभूति ने स्वयं इतना अनुभूत किया कि उसने उत्तररामचरित में यहा तक कह डाला है–

एको रसः करुण एव निमित्तभेदात्
भिन्नः पृथक् पृथगिवाश्रयते विवर्तान्।
आवर्तबुदबुदतरंगमयान् विकारा
नम्भो यथा सलिलमेव हि तत्समस्तम्।।[12]

अर्थात् नाटक में करुण रस ही प्रधान रस है तथा शृंगार, वीर आदि अन्य आठ रसों को वही जन्म देता है ये करुण के ही अलग अलग रुप है। जैसे एक जल ही भँवर, बुद्बुद् और तरंग रूप अनेक विकारों में परिणत होता है। परन्तु वह सव वस्तुतः जल ही है– इसी प्रकार अन्य सव रस करुण रस के ही विकारमात्र हैं।
भवभूति रचित उत्तररामचरित में अथ से इति तक कारुण्यमय है। प्रथम अंक में ही चित्रवीथी का प्रसंग कम कारुणिक नहीं है। दृढ़ निश्चयी राम सीता निर्वासन का निश्चय करते ही अपने जीवन को व्यर्थ समझने लगते है। विलाप करते हुए वे स्वयं कहते है–

शैशवात् प्रभृति पोषितां प्रियां, सौहृदादपृथगाश्रयामिमाम्।
छद्मना परिददामि मृत्यवे, सौनिके गृहशकुन्तिकमिव।।[13]

राम कहते है कि मैं अपनी प्रिया सीता को बाल्यावस्था से पोषन किया हूं , जो प्रेम के कारण कभी भी मेरे से पृथक् अलग नहीं रही, इस प्रिया को मैं छल से उसी प्रकार मृत्यु को दे रहा हूं , जैसे कोई अपने घर में पली हुई चिड़िया को कसाई को दे देता है।
द्वितीय अंक में पंचवटी में पहुँपकर सीता के अभाव में पुराने अनुभूत दृश्यों को देखकर राम कहते है–

चिराद्वेगारम्भी प्रसृत इव तीव्रो विषरसः,
कुतश्चित् संवेगात् प्रचल इव शल्यस्य शकलः।
व्रणो रूढग्रन्थिः स्फुटित इव हृन्मर्मणि पुनः,
पुराभूतः शोको विकलयति मां नूतन इव ।।[14]

पंचवटी को देखकर और वन देवता वासन्ती को स्मरण कर राम कहते है कि सीता के विरह से उत्पन्न शोक इतने दिनों वाद यद्यपि पुराना हो गया था और मैं भी कुछ दिनों के बाद इस दुःख को सहने का अभ्यस्त हो गया था, परन्तु आज पंचवटी को देखकर पुराने शोक नये होकर मुझे व्यथित कर रहे है।
नाटक के तृतीय अंक में तो सीता निर्वासन के कारण राम का शोक चरम सीमा तक पहुंच जाता है, सीता प्राप्ति की कोई आशा न देखकर उनका शरीर शिथिल होने लगता है–

हा हा देवि ! स्फुटति हृदयं ध्वंसते देहबन्धः,
शून्यं मन्ये जगदविरलज्वालमन्तर्ज्वलामि।
सीदन्नधे तमसि विधुरो मज्जतीवान्तरात्मा,
विष्वङ्मोहः स्थगयति कथं मन्दभाग्यः करोमि।।[15]

राम सीता से कहते है कि– तुम्हारे वियोग के कारण मेरा हृदय फटा जा रहा है एवं देह का बन्धन विदीर्ण हो रहा है। मैं सारा संसार को शून्य समझ रहा हूँ एवं निरन्तर ज्वालाओं से मेरा शरीर अन्दर ही अन्दर जल रहा है। और तुम्हारे से अलग होने का कारण मेरी अन्तरात्मा घोर अन्धकार में डूव रही है, मैं मूर्च्छित हो जाता हूँ। मैं एसा मन्दभाग्य हूं कि मेरी समझ में कुछ नहीं आता है। इस प्रकार उद्वेग की मुक्त कण्ठ से प्रकाशन होने के लिए तृतीय अंक तो करुण रस से सरोवर है, और शेष अंकों में उसकी पूर्ण अभिव्यक्ति है।

चतुर्थ अंक में उनके शोक की तुलना कवि ने उस जीर्ण वृक्ष से की है जो भीतर ही भीतर जल चुका हो किन्तु बाहर से त्यों दीख रहा हो–

हृदि नित्यानुषक्तेन सीताशोकेन तप्यते।
अन्तः प्रसृप्तदहनो जरन्निव वनस्पतिः।।[16]

अर्थात् राजर्षिजनक के हृदय में सीता का शोक निरन्तर व्याप्त रहता है, अतः वह उस शोक से सदा उसी प्रकार सन्तप्त रहते है जैसे कि वह जीर्ण वृक्ष जिसके भितर अग्नि फैली हुई है, जलता रहता है।

पंचम और षष्ठ अंक में चन्द्रकेतु और लव का वार्तालाप, राम और लव–कुश का परिचय एवं राम की बच्चों के प्रति उत्सुकता वीर रस प्रधान वर्णन होते हुए भी करुण रस से ओतप्रोत है।

सप्तांक ऐसा अंक है जिसमें तीसरे अंक का ही नैसर्गिक उत्कर्ष है। अपने कृत्य और उसके दुष्परिणाम को देखकर राम बार बार मूर्च्छित होते है, अश्रु निरन्तर बहते रहते है। इसी बातावरण में देवी अरुन्धती राम को सीता समर्पित करती है, महर्षि बाल्मीकि लव–कुश का परिचय कराते हुये उन्हें समर्पित करते है। यह सव वहुत ही करुण और अद्भूत रस के बातावरण में होता है–

करुणद्भूतरसं किंचिदुपनिबद्धम्।[17]

इस प्रकार पूरे ही नाटक में करुण रस अनुस्यूत रहने से आलोचकों ने कहा–कारुन्यं भवभूतिरेव तनुते। करुण रस का इतना मर्मच्छेदी दारुण वर्णन अन्यत्र दुर्लभ। इसी कारण भवभूति को प्रधानतया करुण रस का कवि कहा जाता है। वस्तुतः उत्तररामचरित की विशेषता ही उनकी अविरल, अनविच्छिन्न करुण रसधारा है।

निष्कर्ष–

अतः निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि संस्कृत भाषा लिखित ललित काव्य क्षेत्र में वाल्मीकि और भवभूति ने अपने अपने कारणों से कालजयी महत्ताएँ प्राप्त की है किन्तु जहाँ प्रश्न करुणरस को लेकर खड़ा होता है, वहाँ हम निसन्देह यह कहेंगे कि करुण रस के प्रति जो निष्ठा भवभूति में है, वह वाल्मीकि में नहीं है। वाल्मीकि के करुण वर्णनों में मानव–हृदय को प्रभावित करने की क्षमता है, परन्तु भवभूति के उत्तररामचरित में तो यह अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया है। यह भवभूति का ही काम था। उन्होंने सीता के वियोग में राम को रोते देखकर पत्थर को रुलाया है और वज्र के हृद्य को भी विदीर्ण होते दिखाया है। भवभूति ने करुणरस के प्रयोग में जो क्षमता और दृढ़ इच्छा प्रयोग किये है, वह उन्हें वाल्मीकि की तुलना में विशेष गौरव देते है। वस्तुतः महाकवि भवभूति की प्रसिद्ध और महत्ता करुणरस के कारण ही है। यह सर्वस्वीकृत तथ्य है कि करुणरस को संस्कृत वाड्.मय में उन्हीं के कारण महत्ता प्राप्त हो सकी।

सन्दर्भ–

1. नाट्यशास्त्र– षष्ठ अध्याय, पृः संः 228
2. रस तरंगिनी, आचार्य पं. सीताराम चतुर्वेदी, चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी, पृ.सं. 51।
3. ध्वन्यालोक, चतुर्थ उद्योत, पृ.सं.. 345
4. बाल्मीकि रामायण– 2/18/3
5. उपरिवत्–2/40/29
6. उपरिवत्–2/45/32
7. उपरिवत्–2/65/25
8. उपरिवत्–3/60/5
9. उपरिवत्–7/48/17
10. उपरिवत्–7/48/3
11. उपरिवत्–6/10/15
12. उत्तररामचरित– 3/47
13. उत्तररामचरित– 1/45
14. उत्तररामचरित– 2/26
15. उत्तररामचरित– 3/38
16. उत्तररामचरित– 4/2
17. उत्तररामचरित–रमाकान्त त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, पृः संः 404।